अधिसूचना संख्या :- 518/2022 **अधिसूचना तिथि :- 02/08/2022**

शोधार्थी :- सदानंद वर्मा

शोध-निर्देशक :- प्रो. हेमलता महिश्वर

विभाग :- मानविकी एवं भाषा संकाय, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली – 110025

विषय :- 'प्रेमचंद और ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों में निहित दलित संवेदना का तुलनात्मक अध्ययन'

बीज शब्द- दलित संवेदना, वर्ण व्यवस्था, जातिगत शोषण, चेतना, ब्राह्मणवाद, प्रतिरोध, अस्मिता, मानवाधिकार, समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व।

शोधार्थी की स्थापनाएँ :-

- संवेदना की निर्मिति का आधार भारतीय काव्यशास्त्रीय परम्परा में रस को माना गया है जबकि पाश्चात्य दर्शन परम्परा में इसका आधार भौतिकवादी सिद्धान्त के अन्तर्गत भौतिक और आत्मगत चिंतन को माना गया है।
- दलित साहित्य का विकास अंबेडकरवादी दर्शन से हुआ है। इसमें गरीबी, लाचारी, बेबसी, छलाव, शोषण व अमानुवीय व्यवहार का यथार्थ चित्रण दिखाई पड़ता है।
- दलित साहित्य में फुले-अंबेडकरी चेतना के माध्यम से जिजीविषा, संघर्ष, मानवता व सम्मान की स्थिति को प्राप्त करने का अदम्य साहस दिखाई पड़ता है।
- संवेदना व्यक्ति के पारिवारिक, सामाजिक परिवेश पर निर्मित होती है। एक दलित साहित्यकार और गैर-दलित साहित्यकार की संवेदना में पर्याप्त अंतर होता है। इसमें स्वानुभूति और सहानुभूति की महती भूमिका होती है।
- गैर-दलित साहित्य के अंतर्गत पारम्परिक भाषा और शिल्प को प्राथमिकता दिया जाता है जबकि दलित साहित्य व्यवहारिक जन-जीवन से जुड़े भाषा और शिल्प को प्राथमिकता देता है। ताकि वह दलित जीवन की अभिव्यक्ति और प्रतिरोध को सटीक ढंग से प्रदर्शित कर सके।

पिछले कुछ वर्षों से दलित संवेदना वैचारिकी ने लेखन के क्षेत्र में अपनी एक विशिष्ट पहचान निर्मित की है। इस लेखन में यथार्थपरकता के साथ-साथ अनुभूति का भी विशेष महत्व दिखाई पड़ता है। चूंकि संवेदना का सीधा संबंध संस्कृति, परिवेश, वातावरण एवं आम मनुष्य के जन-जीवन में घटने वाली विविध घटनाओं से होता है जिसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक आदि जैसे पहलु शामिल रहते हैं। इसी कारण

साहित्यिक लेखन में इसका प्रभाव व्यापक रूप से दिखाई पड़ता है। वहीं जब बात दलित संवेदना कि की जाती है तो वह इन सभी पहलुओं पर खरा उतरते हुए दिखाई पड़ती है क्योंकि इसके केंद्र में जिस मनुष्य को प्राथमिकता दी जाती है वह आम जन-जीवन का मनुष्य होता है जिसकी पहचान न के बराबर दिखाई देती रही है। उसकी पहचान, उसका अधिकार, उसकी इच्छा, उसके जीवन आदि की चर्चा कोई मायने नहीं रखती तभी तो इस प्रकार की संवेदनाओं के निरूपण हेतु दलित साहित्य का अस्तित्व दिखाई पड़ रहा है। जहाँ न केवल इन वंचित मनुष्यों, दबे कुचले व्यक्तियों आदि के हक की आवज को बुलंद कर रही है बल्कि उनको मुखरता भी प्रदान करती है। अर्थात् मानवाधिकार, आदमीयत, मनुष्य होने की अस्मिता का बोध तथा जाति, धर्म व मजहबी जैसे विचारों के प्रति सद्भाव व समानतामूलक दृष्टि अपनाते हुए बंधुत्व व भाई चारे की सदिच्छा को प्रेरित कर रही है।

दलित साहित्य के लेखन में उसका परिवेश, संस्कृति, लोक जीवन एवं वातावरण की झलक स्पष्टत: दिखाई पड़ती है जिससे उनकी संवेदनाएँ जुड़ी होती हैं। दलित जीवन के विविध आयामों को प्रस्तुत करने वाली रचनाओं में मानवीय सरोकारों और संवेदनाओं को सर्वाधिक महत्ता दी जाती रही है। हिन्दी साहित्य में कहानी लेखन का विशिष्ट यो योगदान रहा है। कहानी लेखन में प्रेमचंद का स्थान अग्रणीय है। वे एक ऐसे कथाकार हैं जिन्होंने पहली बार हिन्दू समाज में जीवन यापन करते दलितों की यातनाओं, उनके कष्टों व परेशानियों को अपनी कहानियों का विषय बनाया। उनकी कहानियों में शूद्रों और सवर्णों के बीच अंतर्संबधों का बहुत ही अच्छा चित्रण देखने को मिलता है। उनके यहाँ जाति-पाति, छुआ-छुत, ऊँच-नीच जैसे आडम्बरों का बोलबाला होने के साथ-साथ सामंती मनोवृतियों से ग्रस्त विचारों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। वस्तुत: प्रेमचंद का संबंध दलित समाज से प्रत्यक्षतः तो नहीं था, किन्तु उनकी संवेदनाएँ और चिन्ताएँ गलत नही थी। बल्कि वह पूरी तरह से दलित पक्षधरता से जुड़ी हुई दिखाई पड़ती हैं। किन्तु जब उन संवेदनाओं व चिंताओं का अवलोकन अंबेडकरवादी चिंतन के आधार पर किया जाता है तब वह कल्पना और सहानुभूति के स्तर पर स्थित दिखाई पड़ती हैं। उनके लेखन में स्वानुभूति का पक्ष नदारद दिखाई पड़ता है।

प्रेमचंद और ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपने-अपने समय की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विद्रूपताओं, अंधविश्वासों, रूढ़ियों, धार्मिक पाखंडों आदि को अपनी लेखनी के माध्यम से उभरने का यथार्थतः प्रयास किया है। प्रेमचंद चूँकि दलित समाज के न तो व्यक्ति रहे और न ही उस समुदाय से उनका कोई ताल्लुक रहा; फिर भी उन्होंने दलित जीवन से जुड़े जिन प्रसंगो, घटनाओं व स्थितियों का सृजन अपनी रचना के माध्यम से किया है वह गलत नहीं है; बल्कि उस समय की स्थितियों, सामाजिक जड़ताओं एवं पारम्परिक व रूढ़िवादी स्वरूपों की देन है जिसके प्रभाव से ग्रसित दलित अपना जीवन जीते हुए जिस तरीके से शोषण, अत्याचार, हताशा, भुखमरी, गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा इत्यादि के प्रभाव से स्वयं को ग्रसित पाते हैं तथा इससे दु:खी व लाचार जीवन जीने के लिए मजबूर दिखाई पड़ता है; निश्चित तौर पर यही व्याकुलता उन्हें सृजन करने के लिए उकसाती है जो दलित साहित्य के रूप में हम सबके समक्ष दिखाई पड़ता है। एक रचनाकार के तौर पर प्रेमचंद ने भी अपनी रचनाओं के माध्यम से इन्हीं बिन्दुओं, स्थितियों तथा घटनाओं को उकेरने का प्रयास किया है, वहीं ओमप्रकाश वाल्मीकि न केवल दलित सामाज से जुड़े व्यक्ति रहे हैं। बल्कि वे उस समाज की घटनाओं, स्थितियों-परिस्थितियों एवं संस्कृतियों का अवलोकन अपने नजरों से करते हुए दिखाई पड़ते हैं। यही कारण है कि दोनों

रचनाकारों की कहानियों में निर्मित दलित संवेदना के पक्ष में आमूल-चूल बदलाव व परिवर्तन के बिन्दू दिखाई पड़ते हैं। प्रेमचंद ने जहां दलित जीवन व उससे जुड़ी घटनाओं को अपने आस-पास घटित होते हुए जैसा देखा, सुना व महसूस किया उसे उसी रूप में लिखने की कोशिश भी की है; जबकि वहीं ओमप्रकाश वाल्मीकि ने न केवल उन घटनाओं को केवल देखा ही नहीं बल्कि उसे अपने ऊपर भोगा भी, उसके सुख-दुःख को सहा भी। यही कारण है कि संवेदना के स्तर पर दोनों रचनाकारों के यहाँ जहाँ कुछ समानता के बिन्दू देखने को मिलते हैं तो वहीं कुछ असमानता के बिन्दू भी दिखाई पड़ते हैं। समग्रत: यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद और ओमप्रकाश वाल्मीकि अपने-अपने समय और समाज के अद्वितीय रचनाकर रहे हैं। दोनों ही रचनाकारों ने अपने-अपने लेखन के माध्यम से जिस तरह से दलित मुद्दों, घटनाओं, स्थितियों-पारिस्थितियों और दृश्यों का चित्रण किया है वह निश्चित तौर पर दलित साहित्य को एक व्यापक फलक प्रदान करने में अपनी महती भूमिका निभाता है।